पंचम अध्याय

"विवेच्य काव्य का कलात्मक अनुशीलन"

पंचम अध्याय

''विवेच्य काव्य का कलात्मक अनुशीलन''

प्रास्ताविक :

रामदरश मिश्र जी प्रगतिशील कवि हैं। उनका काव्य नयी कविता के दौर में आता है। साधारणत: नयी कविता में अधिकतर व्यवस्था के प्रति अनास्था, मोहभंग तथा भ्रष्ट राजनीति संबंधी चित्रण मिलता है। इस दौर के काव्य में मूल्यपरक चिंता और संप्रेषणीयता को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है। काव्य सृजन में शिल्प से ज्यादा संप्रेषणीयता को महत्त्व देने के कारण हुए आरोपों को बताते हुए रोहिताश्व कहते हैं कि, ''विगत दौर का प्रगतिशील काव्य सृजना के संदर्भ में प्राय: कथ्य याने विषयवस्तु पर जोर देने का विवेचन पाया जाता है। उस पर विचारात्मक प्रतिबद्धता एवं यथार्थ के बावजूद प्रस्तुतीकरण संबंधी कलाहीनता का आरोप लगा है।''[1] चाहे कितने भी आरोप लगाये जायें लेकिन काव्य में संप्रेषणीयता का होना अनिवार्य है। कवि रामदरश मिश्र जी का काव्य संप्रेषणीय है। उन्होंने अपने काव्य में गीत, गज़ल, लघु कविता, लंबी कविता आदि शिल्पविधान के फार्म रूपों का प्रयोग किया है। उनके काव्य में कलात्मकता भी पायी जाती है। साथ-ही-साथ रस, अलंकार, बिंब, प्रतिक आदि का भी प्रयोग मिलता है। इसके साथ ही मिश्र जी का 'बाजार को निकले हैं लोग' बहुत महत्त्वपूर्ण गज़ल-संग्रह है। उनकी गज़लें शास्त्रीय दृष्टि से भी महत्त्व रखती है। इसका भी विवेचन-विश्लेषण इस अध्याय के अंतर्गत किया है। अत: विवेच्य दोनों काव्य-संग्रहों का कलात्मक अनुशीलन इस प्रकार है -

5.1 रामदरश मिश्र के गज़लों के विविध अंग :

कवि रामदरश मिश्र जी की गज़ल यह मुख्य काव्य-शैली नहीं है। वे गज़लों के शायर होने का दावा भी नहीं करते हैं। उन्होंने यह बात गज़ल-संग्रह की भूमिका में विस्तृत रूप से कही है। उनकी 'हिंदी' या 'हिंदुस्तानी' में कई गज़लें हैं। उन्होंने अपनी गज़लों को उर्दू के हू-ब-हू प्रतिक एवं भाषा का प्रयोग न कर उन्हें नवीन रूप में ढ़ालने का प्रयास किया है। ऐसा लगता है कि मुक्तक काव्य में भी लोगों की रुचि कम होने के कारण उन्होंने नवीन काव्य फार्म का प्रयोग किया है।

मिश्र जी की गज़लों के संदर्भ में डॉ. गोविंद उपाध्याय लिखते हैं कि, ''इस संकलन की रचनाएँ अपने ढंग तथा मिजाज में उर्दू गज़ल के काफी निकट हैं किंतु हिंदी के

आग फहम शब्द नपे-तुले रूप में पर्याप्त मात्रा में हैं। साथ ही अभिव्यक्ति में अंतर आना स्वाभाविक है जो संभवत: मिश्र जी की ग़ज़लों को एक खास पहचान भी देता है।''[2] इस प्रकार उनकी ग़ज़लों की एक अलग पहचान है।

कलात्मक दृष्टि से ग़ज़ल में कम-से-कम पाँच और अधिक से अधिक सत्रह शेर होते हैं। कई-कई ग़ज़लकार सत्रह से भी अधिक शेरों का प्रयोग अपनी ग़ज़ल में करते हैं। साधारणत: शेरों की संख्या विषम रखी जाती है। इनमें से कई नियमों का पालन करने का प्रयास मिश्र जी की ग़ज़ल में हुआ है। उनके विवेच्य ग़ज़ल-संग्रह में सिर्फ 39वीं एकही ग़ज़ल है जिसमें सिर्फ चार शेर हैं। बाकी सभी ग़ज़लों में कम-से-कम पाँच और अधिक-से-अधिक नौ शेर मिलते हैं। ग़ज़ल में शेर की विषमता के बारे में नियम का पालन नहीं हुआ है। उनकी ग़ज़लों में 5, 6, 7, 8, 9 ऐसी शेर की संख्या मिलती है। लेकिन उनकी ग़ज़लों के प्रत्येक शेर का अपना एक अलग अर्थ देने में वे सफल हुए हैं।

इसी के साथ ही ग़ज़ल के मतला, मकता, रदीफ़, काफिया तखल्लुस आदि महत्त्वपूर्ण अंग है। इसका भी प्रयोग मिश्र जी की ग़ज़लों में किस प्रकार हुआ है यह देखना महत्त्वपूर्ण है।

5.1.1 **मतला -**

ग़ज़ल के प्रथम शेर को 'मतला' कहते हैं। प्रत्येक शेर दो पंक्तियों का बनता है। उन पंक्तियों को 'मिसरा' कहते हैं। शेर की प्रथम पंक्ति को 'ऊला मिसरा' तो द्वितीय पंक्ति को 'सानी मिसरा' कहते हैं। मतले के दोनों मिसरों में रदीफ और काफिया होता है। तथा अन्य शेर के दूसरे मिसरे में रदीफ और काफिया होता है। इसका सफल प्रयोग मिश्र जी की ग़ज़लों में मिलता है।

5.1.2 **मकता -**

ग़ज़ल का अंतिम शेर 'मकता' कहलाता है। जिसमें 'तखल्लूस' अर्थात् ग़ज़लकार का उपनाम होता है। मकते में तखल्लूस का होना आवश्यक है। जिन ग़ज़लों में तखल्लूस का प्रयोग नहीं होता उसे 'ग़ज़ल का अंतिम शेर' ही कहा जाता है। उर्दू की तुलना में हिंदी ग़ज़ल में तखल्लूस का प्रयोग कम मिलता है।

5.1.3 **रदीफ -**

ग़ज़ल के प्रथम शेर के दोनों मिसरों में और बाद के शेर के दूसरे मिसरे में काफिया के बाद जितने शब्द बार-बार आते हैं उनको 'रदीफ' कहा जाता है। रदीफ

अपनी जगह स्थिर रहता है। मिश्र जी की ग़ज़लों में रदीफ का प्रयोग सफलता से मिलता है।

उदा. "देर से ही सही तुम आए, बहुत अच्छा किया
बाद लंबे वक्त के भाए, बहुत अच्छा किया
हो गये थे गुम कि अपनी ही सुरंगों-बीच हम
खोजकर हम को यहाँ लाये, बहुत अच्छा किया"[3]

उपर्युक्त गज़ल में 'बहुत अच्छा किया' रदीफ है।

मिश्र जी की कुछ ऐसी भी गज़लें मिलती हैं जिनमें रदीफ का प्रयोग नहीं मिलता। काफिया ही दोनों का काम सँभालता है। ऐसी गज़लों को 'गैर मुरद्‌दफ गज़ल' कहा जाता है -

उदा. "दूबे उठा रही हैं नजर राह दीजिये
साये जो बीच में हैं जमे साफ कीजिए
रोके खड़े हैं रास्ते कितने पगों के आप
भूधर जी, आप, ताप बहुत कुछ तो छाजिए"[4]

प्रस्तुत गज़ल में रदीफ का प्रयोग नहीं हुआ है, मात्र काफिया का ही निर्वाह हुआ है। 'दीजिए', 'कीजिए', 'छाजिए' आदि काफिया रदीफ के रूप में प्रयुक्त हुआ है; लेकिन ऐसे उदाहरण उनके गज़लों में बहुत कम मिलते हैं।

मिश्र जी ने कहीं-कहीं आधे से अधिक पंक्ति में रदीफ का प्रयोग किया है। ऐसी गज़लें 'लंबी रदीफ की गज़लें' कही जाती है।

उदा. "तुमने क्या अपना हाल किया है दिनों के बाद?
किसने ये फिर सवाल किया है दिनों के बाद"[5]

यहाँ 'किया है दिनों के बाद' इस लंबे रदीफ का प्रयोग हुआ है। ऐसे उदाहरण बहुत कम मिलते हैं।

5.1.4 **काफिया -**

रदीफ के पहले एक ही आवाज में आनेवाले शब्दों को 'काफिया' कहते हैं। गज़ल में काफिया का प्रयोग मतले के दोनों मिसरों में तथा बाद के शेर के प्रत्येक दूसरे मिसरे में आता है। मिश्र जी की गज़लों में काफिया का प्रयोग इस प्रकार मिलता है -

"रोशनी में बड़ा अँधेरा है
आज यह कौन सा सवेरा है

रात भर साथ हम चले जिसके
दिन में देखा कि वह लुटेरा है।''[6]

उक्त गज़ल में अँधेरा, सवेरा, लुटेरा आदि काफिया है। मिश्र जी की गज़लों में काफिया का प्रयोग सफलता से हुआ है।

इस प्रकार कलात्मकता की दृष्टि से भी मिश्र जी की गज़लें खरी उतरती है।

5.2 **भाषा :**

कवि रामदरश मिश्र जी ने विवेच्य काव्य-संग्रहों में विभिन्न भाषा के शब्दों का प्रयोग किया है। उन्होंने अपने काव्य में भावों की अभिव्यक्ति के लिए जो भी शब्द अनुकूल लगे उसका अपने काव्य में सहजता से प्रयोग किया है। उनके काव्य में संस्कृत, अँग्रेजी, अरबी, फारसी तथा लोक भाषा के शब्दों का प्रयोग मिलता है। उनके दोनों काव्य में से 'बाजार को निकले हैं लोग' गज़ल-संग्रह में अरबी-फारसी शब्दों की भरमार है तथा 'रामदरश मिश्र की प्रतिनिधी कविताएँ' इस काव्य-संग्रह में भी अरबी, फारसी के शब्दों का कई मात्रा में प्रयोग हुआ है। उन्होंने जिन अरबी-फारसी के शब्दों का अपने काव्य में प्रयोग किया है वे आज हिंदी में घुल-मिल से गये हैं। उन्होंने काव्य में अँग्रेजी तथा संस्कृत के शब्दों का भी सफलता से प्रयोग किया है। उनके काव्य में अन्य भाषा के शब्द इस प्रकार मिलते हैं -

5.2.1 **अरबी शब्द -**

अवाम, अरसा, इश्तहार, इम्तहाँ, औलिया, काफिला, जाया, जनाब, जलसा, जमीर, नूर, बाज, मजार, मीनार, मलाल, महफिल, महज, मुफलिसी, लमहा, शख्स, शराफत, सिला, हिना, किताब, कत्ल, वक्त, शुक्र, अखबार, मदरसा, इतमीनान, मुहब्बत, फकीर आदि अरबी भाषा संबंधी शब्द मिश्र जी के काव्य में अंकित हुए हैं।

5.2.2 **फारसी शब्द -**

मायूस, रहनुमाई, रफ्तार, लब, वीरान, शीशी, शिकवा, शामियाना, संगीन, साया, ख्वाब, गोया, गर, गुमनाम, गुम, अरसा, आफताब, आरजू, आब, आशियाँ, आबादी, कारवाँ, कमबख्त, कूचे, जिगर, जुस्तजू, जमीं, जाम, तनहा, तनहाई, दास्ताँ, परिंदा, पुल, पीर, पोशीदा, पै, पैगाम, फरिश्ता, बदनसीब (फा.+अ.), बरपा, बुत, बेगाना, बेखता, बहार, बू, मेहरबान, तहखाना, जबान, मुरगा, मजार, शाही, खुदा आदि अनेक फारसी भाषा के शब्द मिश्र जी के विवेच्य काव्य में मिलते हैं।

5.2.3 **अँग्रेजी शब्द -**

स्ट्रेन, लैंप, बिटेन, बल्ब, साईन बोर्ड, पोस्टर, ट्विस्ट, पेटीकोट, स्कर्ट, फाईल, ऑपरेशन टेबल, फुटपाथ, गैस, प्लास्टिक, ऑक्सीजन, फैक्टरी, कनाटप्लेस, रेकॉर्ड, मशीन, एक्सप्रेस, स्टेशन, टी.बी., मोटार, लेटरबक्स, स्कूल, लाईन आदि अँग्रेजी शब्द मिलते हैं। इसके साथ ही प्रवीपर्स, अयूब, जॉनसन, चाऊ-एन-लाई आदि विदेशी नामों का भी काव्य में प्रयोग मिलता है।

5.2.4 **संस्कृत शब्द -**

पुष्पकेतन, सतीत्व, भरतनाट्यम्, युग, पीत, मृग, गंध, वनवास, महारानी, मंदिर आदि संस्कृत शब्द मिलते हैं। तो कहीं-कहीं संस्कृत काव्य के पूरी पंक्ति को ही उद्धृत किया है। जैसे - ''सश्यशामलां सुजलां सुफलां, वन्दे मातरम्''

5.2.5 **भोजपुरी तथा अन्य ध्वन्यात्मक शब्द -**

मिश्र जी के काव्य में ऐसे भी कुछ शब्द हैं जो काव्य-भाषा अनुरूप नहीं हैं। जैसे - बदकना, खदकना, खनखनाना, छनछनाना। जो काव्य में यथार्थ अभिव्यक्ति के लिए सक्षम बन गये हैं। उनके काव्य में बजबजाना, चिपचिपाना जैसे भोजपुरी भी शब्द मिलते हैं, जो ध्वन्यात्मकता प्रस्तुत करते हैं।

इस प्रकार उनके काव्य में अन्य भाषा के शब्द इतनी चपलता से बिठाए हैं कि उनका स्थान हिंदी के अन्य शब्द लेते तो सौंदर्य ललित ही समाप्त हो जाता।

5.3 **रस :**

भारतीय काव्यशास्त्र में रस को नहत्त्वपूर्ण स्थान है। यह काव्य में रुचि बढ़ाने का कार्य करता है। आचार्य भरतमुनि ने रस को काव्य की आत्मा माना है। काव्य में शृंगार, हास्य, करूण, रौद्र, वीर, भयानक, बीभत्स, अद्‌भुत, शांत, वात्सल्य, भक्ति आदि रस पाये जाते हैं। प्रबंध काव्य में रस को महत्त्वपूर्ण स्थान है लेकिन आधुनिक काल में अधिकतर रचनाएँ मुक्तक में आने के कारण संप्रेषणीयता पर ज्यादा जोर दिया जाता है। अन्य काव्य-तत्त्वों की चर्चा कम होती जा रही है। फिर भी कम-अधिक मात्रा में इसका प्रयोग अनायास रूप में मिलता है। कवि रामदरश मिश्र जी के काव्य में भी रस संबंधी कई उदाहरण मिलते हैं। उनके काव्य में प्रमुख रूप से श्रृंगार, वीर, करूण, रौद्र, बीभत्स आदि रसों का प्रयोग हुआ है। इसका विवेचन इस प्रकार है -

5.3.1 **श्रृंगार रस -**

रामदरश मिश्र जी के काव्य में श्रृंगार रस के दोनों पक्ष संयोग श्रृंगार तथा वियोग श्रृंगार रूपों का सफल प्रयोग हुआ है। उनकी 11वीं गज़ल संयोग श्रृंगार का अद्भुत नमुना है। कई दिनों से बिछुडे हुए प्रेमी जब एक-दूसरे को मिलते हैं तो उनकी हालत किस प्रकार होती है इसका वर्णन करते हुए मिश्र जी कहते हैं -

"तुमने क्या अपना हाल किया है दिनों के बाद?
किसने ये फिर सवाल किया है दिनों के बाद
पल भर में सारी खिड़कियाँ बेपर्द हो गयीं
मौसम ने फिर कमाल किया है दिनों के बाद"[7]

उनकी 'एक नीम मंजरी' भी संयोग श्रृंगार का उत्कृष्ट उदाहरण है।

"एक नीम मंजरी
मेरे आँगन में झरी
काँप रहे लोहे के द्वार।"[8]

संयोग के साथ ही उनके काव्य में वियोग के भी कई उदाहरण मिलते हैं। उनका प्रस्तुत वियोग श्रृंगार का एक श्रेष्ठ उदाहरण है।

"तूने न कुछ कहा-सुना, जैसी टली बला कोई
देता है अपनों को विदा ऐसे भी प्रिय भला कोई?"[9]

इस प्रकार मिश्र जी के काव्य में प्रेम-चित्रण संबंधी श्रृंगार रस का चित्रण हुआ है लेकिन उसमें अश्लीलता का वर्णन नहीं है। भारतीय परंपरा तथा संस्कृति का पालन उनमें होता है।

5.3.2 **करूण रस -**

अगर हमारी प्रिय वस्तु नष्ट हो जाए तो करूण रस की निर्मिती होती है। आधुनिक काव्य में ज्यादातर आम आदमी की पीड़ा का चित्रण मिलता है। इसी कारण अपने आप ही करूण रस की निर्मिती होती है। मिश्र जी के काव्य में करूण रस संबंधी कई उदाहरण मिलते हैं। उनकी 'बरसात गयी' कविता में स्वतंत्रता के पश्चात् के आम आदमी की हुई करूण दशा का चित्रण मिलता है -

"बिन बरसे बरसात गयी
आये, गये, गये और आये
छूछे घन भरमे भरमाये

पथ अगोरते आँखियाँ जगी
बिन सपनों के रात गयी।''[10]

इसप्रकार के उदाहरण मिश्र जी के 'फिर वही लोग', 'साक्षात्कार', 'गठरी' आदि कविताओं में भी मिलते हैं। उनकी ग़ज़ल क्रमांक 1 में करूण रस संबंधी मार्मिक चित्रण मिलता है।

''चूल्हों में है बुझी हुई जलती है जिगर में
कैसी अजीब आग मिली जिंदगी भर को''[11]

इस प्रकार उनके काव्य में अन्य रसों की तुलना में करूण रस का अधिक चित्रण मिलता है।

5.3.3 **रौद्र रस -**

इस रस का स्थायी भाव क्रोध है। रौद्र रस का संचार असाधारण अपराध, अपमान, अपकार अथवा निंदा के कारण उत्पन्न क्रोध से होता है। मिश्र जी के काव्य में रौद्र रस का प्रयोग हुआ है। देश की सामाजिक तथा राजनीतिक दशा को दयनीय बनानेवाले स्वार्थी नेता पर मिश्र जी का मन क्रोधित हो जाता है। उनका रौद्र रूप उनके काव्य में प्रकट होता है -

''दोस्त, भाई, बाप कुछ भी नहीं, बस ईश्वर हैं आप
ना जमीं, ना आस्मां पर फ़कत कुर्सी पर हैं आप
इस शिखर से उस शिखर तक कूदते ही रह गये
गयीं सदियाँ पर अभी तक नस्ल से बंदर हैं आप''[12]

उक्त उदाहरण में भ्रष्ट नेताओं के प्रति कवि का क्रोध प्रकट होने के कारण यहाँ रौद्र रस की निर्मिती हुई है। उनकी अन्य एक कविता 'सागर और मैं' में युवाओं की संकटों से दूर भागनेवाली वृत्ति पर कवि क्रोध व्यक्त करता है -

''लेते जाओ अपने सपने
मेरे दामन पर जो छोड़ गये
साहस हो तो इनको पालो, जूझो, तड़पो
मुझ-सा ही
जारज बच्चे-सा क्यों फेंक रहे
औरों की छाती पर?''[13]

इस प्रकार मिश्र जी के काव्य में रौद्र रस का भी प्रयोग मिलता है।

5.3.4 **बीभत्स रस** -

गंदगी, भट्टी, अरुचिकर एवं घृणास्पद वस्तुओं के वर्णन से हृदय में उत्पन्न ग्लानी द्वारा बीभत्स रस की निष्पत्ति होती है। रामदरश मिश्र जी ने घृणास्पद स्थिति को अपने काव्य में अभिव्यक्त करते हुए देश की दीन-हीन सामाजिक स्थिति को चित्रित किया है।

''पहनाया गया मैं
दूसरे के मैले वस्त्र की तरह गन्धाने लगता है

× × ×

जहाँ पर लोग
या तो थूँकते हैं
या जयजयकार उछालते हैं आँखें मूँदकर''[14]

इस प्रकार बीभत्स रस का प्रयोग मिश्र जी के काव्य में मिलता है।

5.3.5 **वीर रस** -

रामदरश मिश्र जी के काव्य में वीर रस के कई उदाहरण मिलते हैं। इसी के माध्यम से कवि ने लोगों को क्रांति की ओर प्रेरित किया है। कवियों की सच्चाई, उनका कर्तव्य और ईमानदारी को वे इन शब्दों में दर्शाते हैं -

''हमारे हाथ में सोने की नहीं
सरकंडे की कलम है ।
सरकंडे की कलम
खूबसूरत नहीं, सही लिखती है।
वह विरोध के मंत्र लिखती है।
प्रशस्तिपत्र नहीं लिखती है।''[15]

इस प्रकार मिश्र जी के काव्य में श्रृंगार, वीर, रौद्र, करूण तथा बीभत्स आदि रसों का स्पष्ट चित्रण पाया जाता है। बाकी रसों का भी कई-कई जगह आंशिक रूप में प्रयोग मिलता है।

5.4 **अलंकार** :

काव्य में अलंकार का महत्त्वपूर्ण स्थान है। अलंकार काव्य की शोभा बढ़ाने का कार्य करते हैं। जिस प्रकार किसी युवती की गहनों से शोभा बढ़ती है उसी प्रकार

BARR. BALASAHEB KHARDEKAR LIBRARY

अलंकारों से काव्य की शोभा बढ़ती है। लेकिन अति आभूषण सौंदर्य के लिए हानिकारक हैं उसी प्रकार काव्य में अति अलंकारों का प्रयोग रसग्रहणता में बाधा पहुँचाता है। कई लोग अलंकार का प्रयोग विद्वत्ता प्रदर्शन के लिए करते हैं लेकिन रामदरश जी ने ऐसा नहीं किया है। उनके काव्य में अनायास ही अलंकारों का प्रयोग हुआ है जिसके कारण काव्य संप्रेषणीयता में बाधा नहीं पहुँचती।

5.4.1 **अनुप्रास -**

'अनुप्रास' यह शब्दालंकार है। जिस अलंकार में वर्णों या व्यंजनों की किसी प्रकार समानता होती है वह 'अनुप्रास' है। डॉ. भगीरथ मिश्र ने अनुप्रास के पाँच भेद माने हैं। ''इसके पाँच भेद हैं - १. छेक, २. वृत्ति, ३. श्रुति, ४. अन्त्य, ५. लाट।''[16] कवि रामदरश मिश्र के विवेच्य काव्य में इन पाँचों प्रकारों के उदाहरण मिलते हैं।

5.4.1.1 **छेकानुप्रास :-**

जहाँ एक ही वर्ण की अथवा अनेक वर्णों की समानता हो वहाँ 'छेकानुप्रास' होता है। छेक शब्द का अर्थ चतुर है। कवि लोग अपनी चतुराई दिखाने के लिए इस अलंकार का प्रयोग करते हैं इसलिए इसे 'छेकानुप्रास' कहते हैं।

''दूर ही दूर से बुलाता है
कौन है पास नहीं आता है।''[17]

उक्त ग़ज़ल में 'दूर' शब्द की समानता के आधार पर एक बार आवृत्ति हुई है। इसलिए यहाँ छेकानुप्रास अलंकार है।

5.4.1.2 **वृत्यानुप्रास :-**

जब किसी पद्य में एक ही वर्ण की कई बार पुनरावृत्ति होती है वहाँ 'वृत्यानुप्रास' होता है।

उदा. ''बसें, कारें, गाड़ियाँ गुजरी, गुजरती ही गयीं
रास्ते पर तू खड़ा बाँहें उठाता रह गया''[18]

उक्त ग़ज़ल के शेर में 'ग' वर्ण की कई बार पुनरावृत्ति होने के कारण उक्त शेर में वृत्यानुप्रास अलंकार है।

उदा. ''मुझे तो यह सूरज सोने नहीं देता,
सोता हूँ तो सोते में से उठाता है।''[19]

उपर्युक्त काव्य पंक्तियों में 'स' वर्ण की पुनरावृत्ति होने के कारण यहाँ 'वृत्यानुप्रास' अलंकार है।

5.4.1.3 **लाटानुप्रास :-**

यह अलंकार लाट देश (दक्षिण गुजरात) के लोगों को अधिक प्रिय होने से यह 'लाटानुप्रास' कहलाता है। जिस अलंकार में शब्द और अर्थ एकही रहते हैं परंतु अन्य पदों के साथ अन्वय करते ही अभिप्राय या तात्पर्य भिन्न रूप से प्रकट होता है, वहाँ लाटानुप्रास अलंकार होता है।

उदा. ''मुझे अपने चारो ओर गठरियाँ ही गठरियाँ दीखने लगी
छोटे-बड़े सिरों पर लदी हुई अनन्त गठरियाँ''[20]

उक्त काव्य पंक्तियों में 'गठरियाँ' शब्द समस्याओं के अर्थ में आया है। इसका अन्य पदों के साथ अन्वय करने से उसका भिन्न अर्थ प्रकट होगा।

उदा. ''उधर पूरब की हवा बेचैन है
उधर पश्चिम की हवा नाराज है।''[21]

उक्त ग़ज़ल के शेर में 'हवा' वर्तमान माहौल का प्रतीक है। अगर इनका अन्य पदों के साथ अन्वय किया जाय तो भिन्न अर्थ प्रकट होगा।

5.4.1.4 **श्रुत्यानुप्रास :-**

जहाँ एकही उच्चारण स्थान से उच्चरित होनेवाले वर्णों की कई बार आवृत्ति होती हैं वहाँ श्रुत्यानुप्रास अलंकार होता है।

उदा. ''तेज कितनी वक्त की रफ्तार है
हर तरफ दीवार ही दीवार है।''[22]

उक्त शेर में एकही उच्चारण स्थान से उच्चरित होनेवाले 'त्' तथा 'द्' दंत स्थानीय वर्णों की कई बार आवृत्ति होने के कारण यहाँ 'श्रुत्यानुप्रास' अलंकार है।

उदा. ''यहाँ तो बन्द जल में तैरती हैं मछलियाँ
बन्द हवाओं पर टँगे हैं मकान
जैसे कुहरे पर आकाश
बन्द खुशबुओं को बेचती फिरती हैं रातें।''[23]

प्रस्तुत काव्य-पंक्तियों में प्, फ्, ब्, म् आदि ओष्ठ्य ध्वनियों का प्रयोग होने के कारण यहाँ 'श्रुत्यानुप्रास' अलंकार है।

5.4.1.5 **अन्त्यानुप्रास :-**

जहाँ काव्य पंक्तियों में पद के चरण के अंत में एक या अनेक स्वर-व्यंजनों

की आवृत्ति हो वहाँ 'अन्त्यानुप्रास' अलंकार होता है -

उदा. "धीरे-धीरे रात गहरने लगी है
रोशनी अब कुछ समझ में आने लगी है।"[24]

प्रस्तुत गज़ल के शेर में 'लगी है' आदि व्यंजनाक्षरों की प्रत्येक शेर के अंत में आवृत्ति होने के कारण यहाँ अन्त्यानुप्रास है।

5.4.2 **उपमा -**

जहाँ समानता के आधार पर एक वस्तु की दूसरी वस्तु के साथ, समान गुण, धर्म या क्रिया के आधार पर, उपमेय की तुलना उपमान से की जाती है, वहाँ 'उपमा' अलंकार होता है।

उदा. "हाँ, राजधानी एक्सप्रेस जा रही है राजरानी की तरह"[25]

उक्त काव्य पंक्ति में मिश्र जी ने 'राजधानी एक्सप्रेस' को 'राजरानी' की उपमा दी है।

उदा. "दोस्त, भाई, बाप कुछ भी नहीं, बस ईश्वर हैं आप
ना जमीं, ना आस्मां पर फ़कत कुर्सी पर हैं आप"[26]

उक्त शेर में नेता लोगों को व्यंग्य स्वरूप 'ईश्वर' की उपमा दी है।

5.4.3 **अन्योक्ति -**

अन्य के प्रति कही गयी उक्ति को 'अन्योक्ति' कहा जाता है। किसी से अप्रत्यक्ष रूप से बोलना या फटकारना आदि बातें अन्योक्ति के अंतर्गत आती है। मिश्र जी ने अपने विवेच्य काव्य में अनेक स्थानों पर इसका प्रयोग किया है।

उदा. "सावधान
चूहे फिर उतर गये हैं सड़क पर
जल्दी ही घरों में प्रवेश करेंगे।
अपनी-अपनी किताबें सँभाल लो
ये गोदाम या तिजोरी नहीं काटतें
केवल किताबें काटते हैं।
क्योंकि उनमें इनसे बचने
या मरने के उपाय लिखे होते हैं।"[27]

उक्त काव्य-पंक्तियों में 'चूहे' शब्द का प्रयोग भ्रष्टाचारी लोगों के लिए

किया है जो मीड़ियावालों को रिश्वत देकर अपनी बदनामी टालने का प्रयास करते हैं।

उदा. "इस शिखर से उस शिखर तक कूदते ही रह गये
गयी सदियाँ पर अभी तक नस्ल से बंदर हैं आप"[28]

उक्त शेर का प्रयोग दलबदलू नेताओं के लिए किया है अत: यहाँ अन्योक्ति का प्रयोग हुआ है।

5.4.4 **पुनरुक्ति प्रकाश -**

जहाँ भाव को अधिक प्रभावपूर्ण और रुचिपूर्ण बनाने के लिए एक ही शब्द का अनेक बार प्रयोग किया जाता है वहाँ 'पुनरुक्ति प्रकाश अलंकार' होता है।

उदा. "होश सँभालते ही मुझे लगा कि
मेरे सिर पर एक गठरी है -
खाद और गोबर की गठरी,
फिर सीधा-पिसान की एक फटी गठरी
और सबके बीच भूख और भय की गठरी।"[29]

उपर्युक्त काव्य-पंक्तियों में भाव अधिक प्रभावपूर्ण बनाने के लिए मिश्र जी ने 'गठरी' शब्द का बार-बार प्रयोग किया है। अत: यहाँ 'पुनरुक्ति प्रकाश' है।

उदा. "बनाया है मैंने ये घर धीरे-धीरे
खुले मेरे ख्वाबों के पर धीरे-धीरे"[30]

उक्त शेर में उक्ति अधिक प्रभावपूर्ण बनाने के लिए 'धीरे' शब्द का बार-बार प्रयोग किया है। इसलिए यहाँ 'पुनरुक्ति प्रकाश' है।

5.4.5 **मानवीकरण -**

जहाँ जड़ वस्तुओं या प्रकृति पर मानवीय चेष्टाओं का आरोप लगाया जाता है वहाँ 'मानवीकरण अलंकार' होता है।

उदा. "सड़क ने कहा -
चलोगे?
कहाँ?
दायरे से बाहर जहाँ देश है।"[31]

यहाँ 'सड़क' पर मानवीय भावनाओं का आरोप लगाया गया है इसलिए यहाँ 'मानवीकरण' है।

उदा. ‘‘सहम सहम के बह रहा है नदी का पानी
हवा बाहर की कैसी डरी-डरी सी है।’’[32]

उक्त शेर में ‘नदी’ तथा ‘हवा’ पर मानवीय भावनाओं का आरोप लगाया गया है। असल में नदी का पानी कभी शरमाता नहीं है। हवा कभी डरती नहीं है। यह सभी मानवीय क्रियाएँ हैं। इसलिए यहाँ मानवीकरण है।

5.4.6 **अतिशयोक्ति** -

जहाँ अधिक बढ़ा-चढ़ाकर बात कही जाती है, ऐसे अतिशय कथन को ‘अतिशयोक्ति’ कहते हैं। मिश्र जी कहीं-कहीं इतने भावनावश हो जाते हैं कि वहाँ ‘अतिशयोक्ति’ का प्रयोग हुआ है, जिसके कारण लोक सीमाओं का उल्लंघन होता है।

‘‘प्रिय,
तुम आये तो
मैं अपना हाड़-हाड़ फोड़कर
तुम्हारे लिए फूट पड़ा
और मेरा सारा रक्त फूल बनकर दहकता रहा।’’[33]

अंतत: विवेचन विश्लेषण के बाद स्पष्ट होता है कि मिश्र जी के काव्य में अनुप्रास, उपमा, अन्योक्ति, पुनरुक्ति प्रकाश, मानवीकरण, अतिशयोक्ति आदि अलंकारों का प्रयोग मिलता है। इस प्रकार मिश्र जी के काव्य में अलंकार सौंदर्य बढ़ाने में सहाय्यक हुए हैं।

5.5 **प्रतीक योजना** :

प्रतीकों को पाश्चात्य साहित्य से हिंदी में ग्रहण किया है। अँग्रेजी में इसे ‘सिम्बॉल’ कहते हैं। प्रतीकों का निर्माण कवि प्रतिभा का मूलाधार है। प्रतीक काव्य अभिव्यंजना का सशक्त साधन है। परिस्थिति के अनुरूप प्रतीकों का भी अलग अर्थ प्रयुक्त होने लगता है।

नयी कविता के दौर में भी कवियों ने अनेक नव-नवीन प्रतीकों का प्रयोग किया है। कवि रामदरश मिश्र जी के काव्य में भी अनेक नव-नवीन प्रतीकों का प्रयोग मिलता है। उनके काव्य में सहजभाव से आये प्रतीक मिलते हैं। ‘उदयराज सिंह स्मृति सम्मान’ के वक्त रमेश बहादुर से हुई बातचीत में वे अपने प्रतीकों के बारे में कहते हैं कि, ‘‘मैंने कभी सोचकर किसी बिंब या प्रतीक का इस्तमाल किया हो, ऐसा नहीं है। असल में

बिंब और प्रतीक कविता के अनिवार्य अंग हैं। मैंने एक लंबा जीवन देखा है। उस लंबे जीवन से जिस अंश को मैं लेता हूँ, उससे जुड़े हुए बिंब चले आते हैं, प्रतीक चले आते हैं। इसलिए मेरे उपन्यासों में, कविता में या कहानी में आपको, गाँव के बिंब-प्रतीक अधिक मिलेंगे।''[34] उन्होंने अज्ञेय तथा निर्मल वर्मा जैसे अन्य रचनाकारों की तरह अपना अलग चमत्कार दिखाने के लिए बिंबों तथा प्रतीकों का निर्माण नहीं किया है। अन्य साहित्यकारों की तरह उनके काव्य में गहन दार्शनिक बिंब या प्रतीक नहीं मिलते क्योंकि उसे समझने के लिए गहन दार्शनिक अध्ययन की जरूरत होती है। यह सामान्य पाठकों की बस की बात नहीं है। इसलिए उनके काव्य में अधिक जटिल प्रतीक नहीं मिलते।

मिश्र जी के काव्य में कई प्रतीक बार-बार आते हैं। जैसे - सुबह, सड़क, यात्री, वसंत, जंगल, नदी, जल, गठरी आदि। ऐसा लगता है कि ये उनके प्रिय प्रतीक हैं। उन्होंने अपने काव्य में ज्यादातर प्राकृतिक प्रतीकों का प्रयोग किया है। इसके साथ ही उनके काव्य में परंपरागत, उर्दू-फारसी तथा कलात्मक प्रतीक भी मिलते हैं।

5.5.1 **प्राकृतिक प्रतीक -**

मिश्र जी अपनी मिट्टी से जुड़े कवि होने के कारण उनके काव्य में प्राकृतिक प्रतीकों का प्रयोग मिलता है। प्रकृति उनके काव्य का मुख्य स्रोत है। उनके काव्य में वसंत ऋतु, पशु, सुबह, पंछी, पेड़, नदी, किरण, चट्टान, ताड, आम, सृष्टि, सरोवर, धूप, तालाब, मछलियाँ, पानी, नीली झील, पर्वत, हवा, सूरज, बादल, बरसात, रोशनी, अँधेरा आदि प्राकृतिक प्रतीकों का अधिक मात्रा में प्रयोग हुआ है। उक्त सभी प्रतीक जनजीवन से जुड़े हुए हैं। इसमें से वसंत/बहार और उत्साह का प्रतीक है 'मछलियाँ' विभिन्न राजनीतिक पार्टियों का, 'सुबह' स्वतंत्रता का, तो 'पेड़' धार्मिक एकता का प्रतीक है। आदि विविध रूपों में प्रतीकों का प्रयोग हुआ है। उसके कई उदाहरण हम उनके काव्य में देख सकते हैं -

उदा. ''हमेशा <u>आकाश</u> से झरती है एक नदी
और हमेशा ऊपर ही ऊपर कोई पी लेता है,
<u>धरती</u> प्यासी की प्यासी रहती है
और कहने को <u>आकाश</u> से <u>नदी</u> बहती है।''[35]

उपर्युक्त काव्य पंक्तियों में 'आकाश', 'धरती', 'नदी' आदि काव्य में प्रतीक हैं। यहाँ 'आकाश' केंद्रशासन का, 'धरती' आम जनता का, तो 'नदी' सरकारी

योजनाओं का प्रतीक है। उनके काव्य में बिंब ही प्रतीक बनते हैं -

उदा. ''हाँफती ही रह गयी भटकी हवाएँ प्यास में
घुमड़ते ही रहें बादल सावनी आकाश में''[36]

उक्त शेर में 'भटकी हवाएँ' पथभ्रष्ट आम जनता का तो 'सावनी आकाश के बादल', सरकारी योजनाओं का प्रतीक है। जिस प्रकार श्रावण मास में आकाश के बादल दिखते हैं मगर बरसते नहीं है वही हालत सरकारी योजनाओं की है। अत: स्पष्ट है कि अनेक प्राकृतिक प्रतीक मिश्र जी के काव्य में मिलते हैं।

5.5.2 **परंपरागत प्रतीक -**

परंपरागत प्रतीक इतिहास, पुराण तथा धर्मग्रंथों से संबंधित होते हैं। मिश्र जी के काव्य में कई परंपरागत प्रतीक भी मिलते हैं लेकिन वे नये संदर्भ में प्रयुक्त हुए हैं। उनके काव्य में राम, वनवास, देवकुल, सतीत्व, खुदा, महल, मंदिर, रामलीला, इंद्र और चंद्रमा, गोया वंशी, भगवान आदि परंपरागत प्रतीक मिलते हैं। ये सभी प्रतीक विवेच्य काव्य में नये संदर्भ देने में सक्षम हैं।

उदा. ''ट्विस्ट की धुन पर भरतनाट्यम् थिरकने लगता है ...
सतीत्व पेटीकोट-सा सरकने लगता है नीचे,
रेशमी साड़ी ऊपर उठ कर स्कर्ट बन जाती है''[37]

उपर्युक्त काव्य पंक्तियों में सांस्कृतिक बदलाव का चित्रण आया है। इसमें सतीत्व, भरतनाट्यम् तथा रेशमी साड़ी आदि परंपरागत प्रतीक रूप में आये हैं। हिंदू धार्मिक काव्य में राधा और श्रीकृष्ण के प्यार के अनेक प्रसंग मिलते हैं। उसी प्रेम के प्रसंग मिश्र जी के काव्य में आधुनिक संदर्भ लेकर उपस्थित होते हैं -

''तुझको देखा कि गोया वंशी का
एक भटका हुआ सा स्वर देखा''[38]

इस प्रकार मिश्र जी के काव्य में परंपरागत प्रतीकों का प्रयोग मिलता है।

5.5.3 **उर्दू-फारसी ग़ज़लों के प्रतीक -**

हिंदी के अनेक ग़ज़लकारों ने ग़ज़लें लिखी हैं। उनकी ग़ज़लों पर कुछ हद तक उर्दू-फारसी शब्दों का प्रभाव रहा है। इसी कारण काव्य में उर्दू-फारसी के प्रतीकों का आना स्वाभाविक ही है और दूसरा महत्त्वपूर्ण कारण ग़ज़ल यह उर्दू से हिंदी में आयातित विधा है। इसी कारण मिश्र जी के काव्य में उर्दू-फारसी ग़ज़लों के भी कई प्रतीक मिलते

हैं। बहार, पतझड़, पत्थर, बिजली, मयखाना, मय, नूर, मेहरबान, महफ़िल, बयाबान, बिरवां, बुत, पोशीदा, पीर, जाम, जमीर, जनाब, जिगर, कारवाँ, औलियाँ, आफ़ताब, अश्क, बेगाना, शामियाना आदि उर्दू-फारसी ग़ज़लों के प्रतीक मिलते हैं। इन प्रतीकों का विवेच्य काव्य में कई स्थानों पर प्रयोग सहज भाव से मिलता है।

उदा. "पी पी के अपने अश्क में हँसता चला गया मगर
मेरी हँसी के दर्द ने पल में मुझे रूला दिया।"[39]

उदा. "खिले हैं फूल पत्थरों के शामियाने में
हरेक पेड़ की टहनी झरी-झरी सी है।"[40]

उक्त दोनों शेर में 'अश्क' दु:खों का तो 'पत्थरों के शामियाने' आज के भौतिक जीवन का प्रतीक है। इस प्रकार मिश्र जी के काव्य में उर्दू-फारसी की ग़ज़लों से आए प्रतीक मिलते हैं। वे काव्य का विशेष अंग बनकर विवेच्य ग़ज़लों में आये हैं।

5.5.4 **कलात्मक प्रतीक -**

मिश्र जी के काव्य में अनेक नवीन कलात्मक प्रतीक मिलते हैं। ऐसे कलात्मक प्रतीकों को वे अनुभव जगत् से और कहीं से भी ग्रहण करते हैं। जब वे बाजार जाते हैं तो वहाँ तरह-तरह के लोग दिखाई देते हैं, तो वहाँ से भी कई प्रतीक ग्रहण करते हैं। जैसे - बाजार होना, घर बेच बाजार को निकलना, साँस जाना आदि। उनके काव्य में और भी ऐसे कलात्मक प्रतीक मिलते हैं, जैसे - हवा की लाचारी, आदमी-सा होना, रास्ता रुकना, रोशनी में अँधेरा, भिखारी की बिछी चादर, बेनाम चिट्ठियाँ, खाली कनस्तर, गलियाँ, सड़कें आदि।

उदा. "लेटरबक्स में पड़ी हुई चिट्ठियाँ
अनन्त सुख-दु:ख वाली अनन्त चिट्ठियाँ
लेकिन कोई किसी से नहीं बोलती
सभी अकेले अकेले"[41]

उपर्युक्त काव्य-पंक्तियों में 'लेटरबक्स में पड़ी हुई चिट्ठियाँ' यह वर्तमान व्यस्त मानव जीवन का प्रतीक है। जिसके पास किसी के लिए मिलने या बोलने को समय नहीं है।

इस प्रकार मिश्र जी के काव्य में इन प्रमुख प्रतीकों को पाया जाता है। इसके साथ ही उनके काव्य में कई अन्योक्तिमूलक तथा राजनीतिक प्रतीक भी पाये जाते

हैं। जैसे - टोपी, झंडा आदि। उन्होंने जो भी प्रतीक प्रस्तुत किए हैं वे वर्तमान जीवन से पाये हैं। विवेच्य काव्य में प्रस्तुत प्रतीक युगीन-जीवन का चित्रण करने में सहाय्यक सिद्ध होते हैं।

5.6 बिंब योजना :

'बिंब' शब्द अंग्रेजी के 'इमेज' शब्द का पर्याय है। 'बिंब' हिंदी के लिए आधुनिक पश्चिमी काव्यशास्त्र की देन है। कवि अपनी समसामयिक परिस्थितियों से प्रभावित होता है। युग परिवर्तन के अनुरूप उनके मानस में भी परिवर्तन आता है। यही मूर्त-अमूर्त परिवर्तन का परिणाम उनकी रचनाओं में भी दिखाई देता है। अपने अनुभवों की सशक्त अभिव्यक्ति के लिए कवि बिंब का आधार लेते हैं।

मिश्र जी ने अपने काव्य में यथार्थ चित्रण के लिए बिंबों का सहारा लिया है। यह उनकी काव्य-प्रतिभा का परिचायक है लेकिन उन्होंने प्रयत्नपूर्वक बिंबों का प्रयोग नहीं किया है। उनके काव्य में सहज रूप से आये बिंब अधिक मिलते हैं। उनके काव्य में बिंब ही प्रतीक बन जाते हैं। उन्होंने स्वयं भी यह बात मान्य की है। वे कहते है कि, "मेरी रचनाओं में बिंब ही प्रतीक बनने की कोशिश करता है।"[42] मिश्र जी के काव्य में प्राकृतिक, कलात्मक, राजनीतिक, सांस्कृतिक आदि कई प्रकार के बिंब मिलते हैं। इनमें से अधिकतर बिंब प्राकृतिक बिंब हैं।

उदा. "चारों ओर काँटों का जंगल है
और भीतर कहीं
एक डरी हुई लता है।
जाओ, चले जाओ
यही उसके घर का पता है"[43]

उक्त सिर्फ पाँच पंक्तियों की कविता में सुंदर बिंब का निर्माण किया है। इससे देश की वर्तमान स्थिति पर प्रकाश डाला है। इन काव्य-पंक्तियों में 'काँटों का जंगल' दुर्जनों का प्रतीक है, तो 'लता' सज्जनों का प्रतीक है। दुर्जनों की भीड़ में सज्जनों की क्या हालत होती है इसका यह स्पष्ट चित्रण है। उनके काव्य में कई राजनीतिक बिंब भी दृष्टव्य हैं, जैसे -

"और एक टोपी गिर कर
चिकनी फर्श चाटती हुई सरकती है
फिर उठाकर पहन ली जाती है।"[44]

उक्त काव्य पंक्तियों में राजनीतिक बिंबों का प्रयोग हुआ है। इससे राजनीतिक लाचारी स्पष्ट होती है। इन बिंबों के साथ मिश्र जी के काव्य में कई और महत्त्वपूर्ण बिंब मिलते हैं। डॉ. फूलबदन यादव इसकी चर्चा करते हुए कहते है कि, "मौलिक बिंब विधान की दृष्टि से डा. मिश्र जी की बिंब सृष्टि को इन विभिन्न वर्गों के बिंबों में देखा जा सकता है - (अ) शब्द बिंब, (आ) वर्ण बिंब, (इ) समानुभूतिक बिंब, (ई) व्यंजना-प्रवण सामाजिक बिंब, (उ) असंवेष्टित या प्रसृत बिंब"[45] इन बिंबों की चर्चा फूलबदन जी ने मिश्र जी के समग्र काव्य साहित्य को लेकर की है, लेकिन यहाँ सिर्फ विवेच्य (दोनों) काव्य-संग्रहों की दृष्टि से ही चर्चा की है। यहाँ यह देखना आवश्यक है कि विवेच्य काव्य-संग्रहों में कौन-कौन से बिंब मिलते हैं -

5.6.1 **शब्द बिंब -**

'शब्द बिंब' के अंतर्गत एक ही शब्द को अर्थ की दृष्टि से उन पर ज्यादा जोर देकर उन शब्दों से काव्यार्थ को चमत्कृत किया जाता है। मिश्र जी के काव्य में भी कई उदाहरण मिलते हैं लेकिन ग़ज़लों में ऐसे उदाहरण कम मिलते हैं। उनके काव्य-संग्रह के कुछ पंक्तियाँ यहाँ द्रष्टव्य हैं -

"धीरे धीरे कुहरा छँट जाता है
और फिर सड़क उभर आती है
जिस पर गुज़रने लगते हैं
लोग . . . लोग . . . लोग . . ."[46]

प्रस्तुत काव्य पंक्तियों में 'लोग' शब्द को अधिक भाराक्रांत किया गया है। उन पर ज्यादा जोर देकर उसकी तिहरी आवृत्ति की है। जिससे समाज के अनेक प्रकार के लोगों का बोध होता है। इस प्रकार के कई उदाहरण 'सृष्टि', 'साक्षात्कार' आदि कविताओं में भी मिलते हैं।

5.6.2 **वर्ण बिंब -**

'वर्ण बिंब' में वर्णों की विशिष्ट योजना और संचयन द्वारा अर्थगर्भित और व्यंजक बिंबों की सृष्टी होती है। मिश्र जी के 'सागर और मैं' कविता में इसका प्रयोग मिलता है, जैसे -

"स्फीत श्वेत चाँद
हहर उठा सागर हो जैसे किसी मंथन से

ह ... ह ... ह ... हा ... स, ह ... ह ... ह ... हा ... स
दौड़ा तट तोड़ता हुअ
भागा मैं ....''[47]

उपर्युक्त काव्य पंक्तियों में 'ह ... ह ... ह ... हा ... स, ह ... ह ... ह ... हा ... स' आदि वर्ण बिंबों का प्रयोग किया है। ऐसे बिंब उनके ग़ज़लों में नहीं मिलतें।

5.6.3 **समानुभूतिक बिंब -**

''प्राय: देखा जाता है कि मानवीकरण, भाव मास और आत्मनिष्ठ मन:स्थिति के कलात्मक प्रयासभूत तथा बिंबात्मक धरातल पर अधिष्ठित होने के बाद समानुभूतिक बिंबों का रूप लेते हैं।''[48] इस प्रकार के कई बिंब मिश्र जी के काव्य में मिलते हैं, जैसे -

''मुझे लगा राप्ति नदी ने पूरे जवार को
अपनी कुण्डली में लपेट कर एक बड़ा-सा गठ्ठर बना दिया है
जिसे मैं अपने कलेजे पर ढो रहा हूँ।''[49]

उक्त काव्य पंक्तियों में मानवीकरण के साथ कवि का अपनी मातृभूमि के प्रति आत्मनिष्ठ भाव प्रकट होता है। इसलिए यहाँ समानुभूतिक बिंबों का प्रयोग हुआ है।

5.6.4 **व्यंजना-प्रवण सामासिक बिंब -**

ऐसे बिंबों में उत्प्रेक्षा सुलभ कसावट रहती है। ऐसे बिंब विस्तृत न होकर संक्षिप्त होते हैं। मिश्र जी के काव्य में इसके कई उदाहरण मिलते हैं, जैसे -

''उदास धूप है, बस्ती मरी-मरी सी है
सुबह-सुबह सी नहीं, मौन थरथरी-सी है''[50]

उक्त शेर के माध्यम से वर्तमान माहौल सहज दिखाई देता है। इसमें एक उत्प्रेक्षा सुलभ कसावट है। इसलिए यहाँ व्यंजना-प्रवण सामासिक बिंब है।

5.6.5 **प्रसृत बिंब -**

''प्रसृत बिंब प्राय: सी, सा, सम आदि वाचक या लक्षक शब्दों को जोड़कर विस्तृत भावभूमि पर अवस्थित होते हैं।''[51] ऐसे अनेक बिंब मिश्र जी के काव्य में मिलते हैं, जैसे -

''जनाब खेल-खेल में ही खुदा बन बैठे
मेरे जनम बीते आदमी सा होने में''[52]

उक्त शेर से विस्तृत भाव प्रकट होता है। आदमी तो हर एक होता है लेकिन 'आदमी-सा' होने के लिए बहुत परिश्रम सहने पड़ते हैं। शेर में कवि मन का दुख प्रकट होता है। इस प्रकार के और भी बिंब मिश्र जी के काव्य में मिलते हैं।

5.6.6 **ऐंद्रिय बिंब -**

इस बिंब-विधान में इंद्रियों का प्रमुख योग रहता है। यह मानवीय इंद्रियों से संबंधित होने के कारण इन्हें 'ऐंद्रिय बिंब' कहा जाता है। ऐंद्रिय बिंब प्रकारों के कई बिंब मिश्र जी के काव्य में मिलते हैं। जैसे - दृश्य बिंब, दृश्य-श्राव्य बिंब, श्रव्य बिंब, स्पर्श एवं गंध संबंधी बिंब आदि। इन बिंबों को मिश्र जी के विवेच्य काव्य में इस प्रकार देख सकते हैं।

5.6.6.1 **दृश्य बिंब :-**

मिश्र जी का प्रकृति के प्रति गहरा लगाव रहा है। जिस प्रकृति के साथ उन्होंने बचपन के कई साल बिताये हैं उसकी वे हू-बहू तस्वीर आँखों के सामने खड़ी करते हैं। उनके काव्य में दृश्य बिंबों का आधिक्य है। कोई भी स्थिति हो उनका चित्र आँखों के सामने उपस्थित करने में उन्हें सफलता मिलती है, जैसे -

"दिन का सरोवर . . . . .
लबालब भरा हुआ धूप का गुनगुना जल
चिड़ियाँ पंख फैलाये नहाती रहीं
गाती रहीं आत्मा के गीत"[53]

उक्त काव्य पंक्तियों में 'सरोवर' दृश्य स्पष्ट सामने आता है। तो अन्य काव्य-पंक्तियों में कवि ने अपने गाँव का दृश्य खड़ा किया है। जैसे -

"किंतु यह क्या
राप्ती तो उसी तरह अपनी कुण्डली में
पूरे जवार को लपेटे हुए पड़ी है
और उस गट्ठर को सिर पर उठाए
पसीना पोंछती हुई एक विराट भीड़
शहर की ओर मुँह करके खड़ी है"[54]

5.6.6.2 **दृश्य-श्रव्य बिंब :-**

मिश्र जी के काव्य में कई दृश्य-श्रव्य बिंब भी मिलते हैं, जैसे -

"हवाएँ चिल्लाती रहीं
सूरज अपने घोंडों पर चाबुक बरसाता रहा,
कुत्ते भूँकते रहें,
मशीनें रह-रहकर धक्का मारती रहीं,
लेकिन नहीं हिला यह चट्टान-सा यह दिन
तभी एक फूल कहीं खिलकर मुसकरा पड़ा
और न जाने क्या हुआ कि
दिन थरथराकर भीतर से पीघलने लगा
और धीरे-धीरे एक नदी बन गया।"[55]

उपर्युक्त काव्य पंक्तियाँ दृश्य-श्रव्य बिंब का सुंदर उदाहरण है। इसके माध्यम से आज का 'मशिनी युग' तथा उनका कोलाहल का स्पष्ट चित्र कवि सामने लाता है।

5.6.6.3 **श्रव्य बिंब :-**

श्रव्य बिंब कर्णेंद्रिय से संबंधित होता है। मिश्र जी के काव्य में कई 'श्रव्य बिंब' भी मिलते हैं, जैसे -

"गाढ़े गये दिन बीत रे, बैला बाँएँ से औं औं!"[56]

उपर्युक्त किसान गीत में 'औं-औं' ध्वनियों के द्वारा गीत में एक नाद निर्माण हुआ है जिसके माध्यम से 'श्रव्य बिंब' की निर्मिती हुई है।

5.6.6.4 **स्पर्श बिंब :-**

स्पर्श बिंबों की निर्मिती स्पर्शजन्य संवेदनाओं के समन्वय से होती है। ऐसे भी कई बिंब मिश्र जी के काव्य में मिलते हैं, जैसे -

"दिशा-दिशा से हाथ मिलाती
लेकिन भीतर डरा-डरा-सा।
शबनम को छूते डर लगता, फूट न पड़े कहीं अंगारे"[57]

उक्त काव्य पंक्तियों में 'स्पर्श' बिंबों का सुंदर समन्वय हुआ है।

5.6.6.5 **घ्राण बिंब :-**

घ्राण बिंबों का निर्माण घ्राणेंद्रिय के आधार पर किया जाता है। इसमें गंध का प्राधान्य रहता है। मिश्र जी की 'सृष्टि' बिंब की दृष्टि से उत्कृष्ट कविता है। इसमें

'आम' और 'ताड़' दोनों वृक्षों की तुलना की है। 'आम' समाज में शांति फैलानेवाला तो 'ताड़' समाज में अशांति फैलानेवाले लोगों का प्रतीक है। यहाँ आम की प्रशंसा करते समय सुंदर घ्राण बिंबों की निर्मिती हुई है -

''मगर उस आम को देखो
कुछ नहीं बोलता
केवल
धीरे-धीरे अपने में सुगंधित रस बटोरता है
और चुपचाप बाँट देता है हवाओं को
चिड़चिड़ी हवाएँ नम होकर
सृष्टि की साँस-साँस में समा जाती है -
वसंत . . . .''[58]

मिश्र जी ग़ज़लों में भी कहीं-कहीं घ्राण बिंब मिलते हैं। ग़ज़ल क्रमांक 10 में प्रेयसी के सौंदर्य का वर्णन करते हुए मिश्र जी कहते हैं -

''छलक रही है तन से आब, आब से खुशबू
सुबह की धूप है या तेरी ही परछाई है।''[59]

जिस प्रकार 'आब' याने 'शराब' से एक प्रकार की खुशबू निकलती है उसी प्रकार नारी के शरीर से भी एक तरह की अलग खुशबू निकलती है। जैसे - शराब की खुशबू से शराबी धुंद होता है उसी प्रकार अपनी प्रेयसी के तन से प्रियकर धुंद हो जाता है। दोनों प्रेमी एक दूसरे के प्रेम में घुलमिल जाते हैं।

इस प्रकार मिश्र जी के काव्य में ब्रिंबों का प्रयोग भी सफलता से हुआ है।

विवेच्य कलात्मक बातों के अध्ययन के पश्चात् भी उनके काव्य में और भी कई कलात्मक विशेषताएँ दिखाई देती है। इनमें से भावप्रवणता, गेयता, संक्षिप्तता, व्यंग्य प्रधानता तथा लंबी कविता आदि उनके काव्य की महत्त्वपूर्ण विशेषताएँ रही हैं। उनकी बहुत-सी कविताएँ तथा ग़ज़लें गेय हैं। उनके काव्य में संक्षिप्तता के साथ तीखा व्यंग्य भी है। उनकी 'लंबी कविताएँ' पौराणिक आख्यान पर आधारित न होकर इसमें वर्तमान स्थिति का चित्रण है। उनके काव्य में यथार्थता, भावप्रवणता तथा कलात्मकता का सुंदर समन्वय परिलक्षित होता है।

निष्कर्ष :

रामदरश मिश्र जी के विवेच्य दोनों काव्य-संग्रहों का कलात्मक अध्ययन करने के पश्चात् हम इस निष्कर्ष तक पहुँचते हैं कि मिश्र जी का काव्य कलात्मक दृष्टि से एक अलग महत्त्व रखता है। उनके काव्य में गीत, ग़ज़ल, लंबी कविता, लघु कविता, मुक्त काव्य आदि काव्य प्रकारों के प्रयोग परिलक्षित हुए हैं। संप्रेषणीयता तथा संक्षिप्तता उनके काव्य की महत्त्वपूर्ण विशेषता रही है।

मिश्र जी के विवेच्य दोनों काव्य-संग्रहों में से एक ग़ज़ल संग्रह तो दूसरा प्रतिनिधि काव्य-संग्रह है। उनकी ग़ज़लें कलात्मकता की दृष्टि से उर्दू ग़ज़लों के निकट पहुँचती हैं। उनकी गज़लों में उर्दू जैसे रदीफ, काफिया, मतला आदि का सफल प्रयोग मिलता है। उनकी गज़लों में मकते में, तखल्लूस का प्रयोग नहीं मिलता। शेष अन्य गज़लों में ग़ज़ल संबंधी नियमों का पालन किया गया है। इसके साथ ही मिश्र जी के विवेच्य दोनों काव्य-संग्रहों में काव्य-भाषा का सफल निर्वाह हुआ है। उनकी काव्य भाषा में दुरूहता न होने के कारण सामान्य-से-सामान्य पाठक भी उसे आसानी से समझ सकता है। उनके काव्य में अरबी, फारसी, अँग्रेजी, संस्कृत, भोजपुरी तथा अन्य भाषा के भी शब्द मिलते हैं। अरबी-फारसी के अधिकतर शब्द उनकी ग़ज़लों में मिलते हैं। उनकी काव्य भाषा में कई अरबी-फारसी शब्द घुलमिल गये हैं।

उनके काव्य में विभिन्न रसों का भी परिपाक हुआ है। इसमें से श्रृंगार, करूण, रौद्र, बीभत्स, वीर आदि रस प्रमुख रूप से पाए गए हैं। उन्होंने करूण रस के अंतर्गत देश की दुर्दशा का चित्रण किया है, तो श्रृंगार के अंतर्गत प्रेम के विभिन्न दशाओं का चित्रण प्राप्त होता है। मिश्र जी के काव्य में विभिन्न रसों के साथ अलंकारों का भी प्रयोग मिलता है। उन्होंने काव्य में अनुप्रास, उपमा, अन्योक्ति, पुनरुक्ति प्रकाश, मानवीकरण, अतिशयोक्ति आदि अलंकारों का प्रयोग किया है। मिश्र जी के अलंकार काव्य की शोभा बढ़ाने में सहाय्यक सिद्ध हुये हैं। इसका उनके काव्य की संप्रेषणीयता में कोई फर्क नहीं पड़ता। वे सहज भाव से काव्य में आए हैं।

इसके साथ ही मिश्र जी के काव्य में प्रतीक तथा बिंबों का भी प्रयोग मिलता है। उनके काव्य में प्रतीक तथा बिंब अनुभव जगत के होने से वे जनजीवन से आधिक जुड़े हैं। उनके काव्य में अधिकतर बिंब प्रतीक बन जाते हैं। साथ ही उनके काव्य में विभिन्न प्रतीकों का सफल प्रयोग मिलता है। जैसे - प्राकृतिक, परंपरागत, उर्दू-फारसी

काव्य के तथा कलात्मक प्रतीक आदि। इनमें से प्राकृतिक तथा कलात्मक प्रतीक अधिक रूप में पाये जाते हैं। बिंब निर्माण के अंतर्गत उन्होंने बौद्धिक रूप से बोझील तथा दार्शनिक बिंबों का निर्माण कम मात्रा में किया है। क्योंकि वे जानते हैं कि ऐसे बिंब समझने के लिए पाठकों में गहन अध्ययन तथा प्रतिभा की जरूरत होती है। उनके काव्य में विभिन्न बिंबों का सहजता से प्रयोग मिलता है। अत: प्राकृतिक तथा राजनीतिक बिंबों के साथ ही शब्द बिंब, वर्ण बिंब, समानुभूतिक बिंब, व्यंजना प्रवण-सामासिक बिंब, प्रसृत बिंब तथा ऐंद्रिय बिंब भी मिलते हैं। इसके साथ ही बिंबों का सफल निर्वाह हुआ है। इन कलात्मक विशेषताओं के बावजूद भी उनके काव्य में और भी कई कलात्मक विशेषताएँ पायी जाती हैं। इसमें गेयता, भावप्रवणता, यथार्थता, संक्षिप्तता, व्यंग्यप्रधानता आदि प्रमुख कलात्मक विशेषताएँ भी परिलक्षित होती हैं। निष्कर्षत: मिश्र जी का विवेच्य काव्य कलात्मकता की दृष्टि से सफल तो है ही साथ-साथ युगीन जीवन को प्रस्तुत करने में भी सहाय्यक सिद्ध होता है।

संदर्भ :

1. रोहिताश्व, समकालीनता और शाश्वतता, पृष्ठ - 151
2. नित्यानन्द तिवारी/ज्ञानचन्द गुप्त, रचनाकार रामदरश मिश्र, पृष्ठ - 146
3. रामदरश मिश्र, बाजार को निकले हैं लोग, ग़ज़ल क्रमांक 43, पृष्ठ - 49
4. वही, ग़ज़ल क्र. 22, पृष्ठ - 28
5. वही, ग़ज़ल क्र. 11, पृष्ठ - 17
6. वही, ग़ज़ल क्र. 5, पृष्ठ - 11
7. वही, ग़ज़ल क्र. 11, पृष्ठ - 17
8. सं. रघुवीर चौधरी, रामदरश मिश्र की प्रतिनिधि कविताएँ, 'एक नीम मंजरी', पृष्ठ - 106
9. रामदरश मिश्र, बाजार को निकले हैं लोग, गज़ल क्र. 39, पृष्ठ - 45
10. सं.रघुवीर चौधरी, रामदरश मिश्र की प्रतिनिधि कविताएँ, बरसात गयी,पृष्ठ-118
11. रामदरश मिश्र, बाजार को निकले हैं लोग, गज़ल क्र. 1, पृष्ठ - 7
12. वही, गज़ल क्र. 13, पृष्ठ - 19
13. सं. रघुवीर चौधरी, रामदरश मिश्र की प्रतिनिधि कविताएँ, सागर और मैं, पृष्ठ-34
14. वही, होने न होने के बीच, पृष्ठ - 35-36

15. वही, कलम, पृष्ठ - 67
16. डॉ. भगीरथ मिश्र, काव्यशास्त्र, पृष्ठ - 148
17. रामदरश मिश्र, बाजार को निकले हैं लोग, ग़ज़ल क्र. 38, पृष्ठ - 44
18. वही, गजल क्र. 6, पृष्ठ - 12
19. सं. रघुवीर चौधरी, रामदरश मिश्र की प्रतिनिधि कविताएँ, कंधे पर सूरज, पृष्ठ-48
20. वही, गठरी, पृष्ठ - 55
21. रामदरश मिश्र, बाजार को निकले हैं लोग, गज़ल क्र. 23, पृष्ठ - 29
22. वही, ग़ज़ल क्र. 2, पृष्ठ - 8
23. सं. रघुवीर चौधरी, रामदरश मिश्र की प्रतिनिधि कविताएँ, जंगल, पृष्ठ - 47
24. रामदरश मिश्र, बाजार को निकले हैं लोग, ग़ज़ल क्र. 45, पृष्ठ - 51
25. सं. रघुवीर चौधरी, रामदरश मिश्र की प्रतिनिधि कविताएँ, राजधानी एक्सप्रेस, पृष्ठ-76
26. रामदरश मिश्र, बाजार को निकले हैं लोग, ग़ज़ल क्र. 13, पृष्ठ - 19
27. सं. रघुवीर चौधरी, रामदरश मिश्र की प्रतिनिधि कविताएँ, चूहे, पृष्ठ -73-74
28. रामदरश मिश्र, बाजार को निकले हैं लोग, ग़ज़ल क्र. 13, पृष्ठ - 19
29. सं. रघुवीर चौधरी, रामदरश मिश्र की प्रतिनिधि कविताएँ, गठरी, पृष्ठ - 55
30. रामदरश मिश्र, बाजार को निकले हैं लोग, गज़ल क्र. 54, पृष्ठ - 60
31. सं. रघुवीर चौधरी, रामदरश मिश्र की प्रतिनिधि कविताएँ, सड़क, पृष्ठ-69
32. रामदरश मिश्र, बाजार को निकले हैं लोग, गज़ल क्र. 44, पृष्ठ - 50
33. सं. रघुवीर चौधरी, रामदरश मिश्र की प्रतिनिधि कविताएँ, सेमल, पृष्ठ-69
34. सं. प्रथम राज सिंह, नईधारा (द्वैमासिक) अप्रैल-मई 2007, पृष्ठ - 12
35. सं. रघुवीर चौधरी, रामदरश मिश्र की प्रतिनिधि कविताएँ, नदी बहती है, पृष्ठ-66
36. रामदरश मिश्र, बाजार को निकले हैं लोग, ग़ज़ल क्र. 18, पृष्ठ - 24
37. सं.रघुवीर चौधरी, रामदरश मिश्र की प्रतिनिधि कविताएँ, फिर वही लोग,पृष्ठ-97
38. रामदरश मिश्र, बाजार को निकले हैं लोग, ग़ज़ल क्र. 33, पृष्ठ - 39
39. वही, ग़ज़ल क्र. 49, पृष्ठ - 55
40. वही, ग़ज़ल क्र. 44, पृष्ठ - 50
41. सं. रघुवीर चौधरी, रामदरश मिश्र की प्रतिनिधि कविताएँ, चिट्ठियाँ, पृष्ठ-86

42. सं. प्रथम राज सिंह, नई धारा (द्वैमासिक) अप्रैल-मई 2007, पृष्ठ - 13

43. सं. रघुवीर चौधरी, रामदरश मिश्र की प्रतिनिधि कविताएँ, पता, पृष्ठ - 67

44. वही, फिर वही लोग, पृष्ठ - 93

45. डा. फूलबदन यादव, रामदरश मिश्र : व्यक्तित्व और कृतित्व, पृष्ठ - 144

46. सं. रघुवीर चौधरी, रामदरश मिश्र की प्रतिनिधि कविताएँ, आमने सामने मकान, पृष्ठ - 41

47. वही, सागर और मैं, पृष्ठ - 34

48. डा. फूलबदन यादव, रामदरश मिश्र : व्यक्तित्व और कृतित्व, पृष्ठ - 145

49. सं. रघुवीर चौधरी, रामदरश मिश्र की प्रतिनिधि कविताएँ, गठरी, पृष्ठ - 56

50. रामदरश मिश्र, बाजार को निकले हैं लोग, ग़ज़ल क्र. 44, पृष्ठ - 50

51. डा. फूलबदन यादव, रामदरश मिश्र : व्यक्तित्व और कृतित्व, पृष्ठ - 147

52. रामदरश मिश्र, बाजार को निकले हैं लोग, ग़ज़ल क्र. 3, पृष्ठ - 9

53. सं. रघुवीर चौधरी, रामदरश मिश्र की प्रतिनिधि कविताएँ, सरोवर, पृष्ठ - 85

54. वही, गठरी, पृष्ठ - 58

55. वही, दिन, पृष्ठ - 74

56. वही, गाढ़े गये दिन बीत, पृष्ठ - 117

57. वही, खाली हूँ मन भरा भरा-सा, पृष्ठ - 116

58. सं. रघुवीर चौधरी, रामदरश मिश्र की प्रतिनिधि कविताएँ, सृष्टि, पृष्ठ-74-75

59. रामदरश मिश्र, बाजार को निकले हैं लोग, ग़ज़ल क्र. 10, पृष्ठ - 16

❑❑❑❑